समाज की पीड़ा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मनुष्यों के समूह को समाज कहते हैं। पशुओं के समूह को समज कहते हैं। एक मात्रा का ही अन्तर है किन्तु भाव में महान अन्तर है। मनुष्य समाज में रहता है। समाज में वर्गभेद, जातिभेद और मत–मतान्तर देखे जाते हैं। आज समाज में गरीबों एवं अमीरों की खाई बढ़ रही है। व्यक्ति इतना लोभी हो गया है कि चारों तरफ से लूट खसोट कर अपना घर भर रहा है। व्यक्ति को अपनी चिंता है और अपने परिवार की चिंता है, समाज की चिंता उसे नहीं है। समाज में असंतोष बढ़ता जा रहा है। समाज में विषमता बढ़ रही है। असंतोष की आग इतनी तेजी से बढ़ रही है कि समय रहते मानव सचेष्ट नहीं हुआ तो सम्भव है वह आग सबको जला दे। सामाजिक बुराइयां बढ़ रही हैं। दहेजप्रभा, बलात्कार, भ्रष्टाचार, वैमनस्य, असहनशीलता, महिलाओं पर अत्याचार, बुजुर्गों की पीड़ा दिनों दिन बढ़ रही है। परिवार भी खण्डित हो रहा है। संयुक्त परिवार प्रथा टूट गयी है। न्यूक्लियर फैमिली प्रथा बढ़ रही है। आज एक परिवार पति–पत्नी और बच्चों तक सीमित रह गया है। समाज में एकांगीपन बढ़ रहा है। बुद्धि संकुचित होती जा रही है। समस्याएं बढ़ती जा रही है। परिवार में पति और पत्नी दोनों नौकरी–पेशे वाले हैं। वे बच्चों को नौकरों के सहारे छोड़कर उनसे दूर रहते हैं। इससे बच्चों का बचपन छिना जा रहा है। जिस प्रेम और स्नेह की आवश्यकता उन्हें है वह उन्हें नहीं मिल रही है। इससे संस्कार बिगड़ रहा है। इन सब बुराईयों को छोड़कर पुनः संस्कार का बीजारोपण आवश्यक है। समाज की पीड़ा कई प्रकार से सामने आ रही है। समाज को सुधारने के लिए व्यक्ति को सुधरना आवश्यक है। बिना व्यक्ति के सुधरे समाज का सुधार नहीं हो सकता। आज बच्चे माता–पिता को अकेले छोड़कर अपना घर अलग बसा लेते हैं जिससे वृद्धावस्था में माता–पिता की बहुत दुर्दशा होती है। माता–पिता ने जिन बच्चों को पढ़ा–लिखाकर उन्हें अपने पैरों पर चलने लायक बनाया वही माता–पिता आज असहाय है। यह सामाजिक बुराई बढ़ती जा रही है। मानव की सोच समाज को बिगाड़ रही है।

सहनशीलता नष्ट होती जा रही है। व्यक्ति अपने लाभ के लिए दूसरे व्यक्ति को धोखा देने में नहीं हिचक रहा है। हर क्षेत्र में गिरावट दिख रही है। इस गिरते स्तर को सुधारना आवश्यक है।

समाज के विकास प्रक्रिया में दो चीजे महत्त्वपूर्ण आधार रखती हैं– व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, व्यक्ति की आर्थिक स्थिति। सामाजिक स्थिति में व्यक्ति का पद, रोजगार, सामाजिक निर्णय प्रक्रिया में हिस्सा, व्यक्ति की जाति, धर्म आदि तथा आर्थिक स्थिति में व्यक्ति की आर्थिक साधनों तक पहुंच, उसकी उपलब्धता तथा सम्पति तथा आर्थिक साधनों की सुनिश्चितता को सम्मिलित किया जाता है। कई अवसरों पर यह देखने में आता है कि आर्थिक स्थिति का सशक्त होना, सामाजिक स्थिति को भी सशक्त कर देता है, परन्तु कुछ जगहों में यह प्रभाव नगण्य नजर आता है। एक अनुसूचित जाति का व्यक्ति चाहे कितना भी साधन सम्पन्न और आर्थिक स्थिति से सशक्त हो परन्तु समाज में उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है। सांस्कृतिक, आर्थिक एंव सामाजिक परिदृश्यों में परिवर्तन आया, विशेषकर आर्थिक परिदृश्य में। बदलाव की बयार में आमजन की परिस्थितियों में भी परिवर्तन हुआ। अच्छी चिकित्सकीय सेवा, खाद्यान्न उपलब्धता, आर्थिक सुदृढ़ीकरण ने जीवन प्रत्याशा को बढ़ा दिया। समाज सेवा की सबसे अधिक जरूरत वरिष्ठ नागरिक अर्थात् वृद्धों को होती है। वृद्धावस्था को मानव जीवन की चौथी अवस्था कहा गया है। जिसमें व्यक्ति आगे देखना यानी भविष्य के सुखद सपने बुनना बंद कर देता है। भावात्मक दृष्टि से भले ही बुजुर्ग, सम्मान, श्रद्धा और आस्था के पात्र माने जाते हों लेकिन व्यावहारिक धरातल पर इन वरिष्ठ नागरिकों को अनेक तरह से कष्टों और परेशानियों से गुजरना पड़ता है। अभी तक वृद्धावस्था, व्यक्तिगत या पारिवारिक समस्या मानी जाती थी लेकिन दुनियाभर में वृद्धजनों की संख्या में हो रही वृद्धि के कारण उनकी देखभाल अब परिवार के साथ–साथ समाज और शासन की भी जिम्मेदारी बनती जा रही है। वृद्धजनों की संख्या बढ़ने के अलावा इस मुद्दे से जुड़े और ऐसे अनेक पहलू हैं, जो सरकार और स्वंयसेवी संगठनों के लिए चुनौती पेश कर रहे हैं। समाज सेवा का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है। समाज के उत्थान और उन्नति के लिए जो कुछ भी प्रयास किये जाते हैं, वह सब समाज सेवा में गिने जाते हैं। समाज सेवा करना सभी मनुष्यों का नैतिक उत्तरदायित्व है। अपना

नैतिक कर्त्तव्य समझते हुए मानव को यह कार्य करना चाहिए। हर कार्य के लिए सरकार की तरफ दृष्टि नहीं लगानी चाहिए। गांव के छोटे–मोटे कार्यों को गांवों के लोग ही संगठन बनाकर यदि पूरा कर लें तो इससे गांव की उन्नति होगी, समाज की उन्नति होगी और राष्ट्र की उन्नति होगी। समाज में छोटे–बड़े, ऊंच–नीच का भेद–भाव भूलकर समानता के आधार पर सबके साथ व्यवहार होना चाहिए। पदार्थ के प्रति आशक्ति को छोड़कर मानवता के विषय में चिंतन आवश्यक है। ऐसा चिंतन करने से समाज की पीड़ा दूर हो सकती है।